Chap-5

पंचम अध्याय : लखपति सिंह के खण्डकाव्य

पंचम अध्याय

लखपतिसिंह के खण्ड-काव्य

हिन्दी के रीतिकाल में मुक्तक और प्रबन्ध दोनों प्रकार की रचनाएँ मिलती हैं, किन्तु प्रधानता मुक्तक काव्य की रही । लखपतिसिंह के साहित्य में भी दोनों प्रकार की रचनाएँ मिलती हैं । उनके शास्त्रीय ग्रन्थों, जो कि मुक्तक हैं, का विवेचन पूर्ववर्ती अध्याय में किया जा चुका है । प्रबन्ध काव्य के अन्तर्गत आनेवाली " लखपति भक्ति विलास " और " सदाशिव ब्याह " ये दो रचनाएँ ही हैं । इनमें से प्रथम " लखपति भक्ति विलास " रीतिकालीन काव्य प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व न करके एक प्रकार से भक्ति काव्य की कोटि में रखी जा सकती है किन्तु द्वितीय कृति " सदाशिव ब्याह" रीतिकाल की मुख्य प्रवृत्ति शृंगारिकता के निकट की है ।

(१) लखपति भक्ति विलास :

तृतीय अध्याय के अन्तर्गत दिये गये संक्षिप्त परिचय से यह स्पष्ट है कि " लखपति भक्ति विलास " पौराणिक कथा पर आधारित खण्डकाव्य है । भक्त प्रह्लाद और असुरराज हिरण्यकश्यपु की प्रसिद्ध पौराणिक कथा के माध्यम से कवि भौतिक और विलासी जीवन की क्षणभंगुरता और निरर्थकता का निरूपण करना चाहते हैं । अनेक मार्मिक उदाहरणों एवं लोकप्रचलित दृष्टांतों द्वारा इसमें भक्ति और तत्वज्ञान के महत्व का प्रतिपादन किया गया है । अपने इस उद्देश्य की सिद्धि के लिये कवि ने इस प्रसिद्ध कथा में कहीं कहीं मौलिक प्रसंगों की उद्भावना भी की है । परिणामतः प्रस्तुत खण्डकाव्य इतिवृतात्मक कम और मार्मिक उपदेशों से संश्लिष्ट अधिक बन गया है । इसके सम्यक्

अनुशीलन के लिये " लखपति भक्ति विलास " की कथावस्तु का परिचय आवश्यक है ।

संक्षिप्त कथा :

असुरराज हिरण्यकश्यपु अपनी सर्वोपरिता सिद्ध करने के लिये कठोर तपश्चर्या करने लगा । इन्द्र ने यह जान कर उसके राज्य पर आक्रमण करके उसकी गर्भवती रानी कयाधुया का अपहरण किया, किन्तु महर्षि नारद के यह समझाने से कि रानी के गर्भ में असुर न होकर भगवान् का परमभक्त है, इन्द्र ने रानी को छोड़ दिया । नारदजी ने रानी को भगवद्भक्ति का उपदेश दिया । गर्भस्थित प्रह्लाद पर इसके संस्कार पड़े ।

इधर प्रह्लाद का जन्म हुआ और उधर हिरण्यकश्यपु की कठिन तपश्चर्या से प्रसन्न होकर ब्रह्मा ने उसको इच्छित वरदान दिया कि पृथ्वी, आकाश, और पाताल में से कहीं भी, दिन और रात के किसी भी समय में, किसी भी शस्त्र के द्वारा, सुर, नर और असुर कोई भी उसको मार नहीं सकेगा । वरदान पाकर अभिमानी हिरण्यकश्यपु ने अपने राज्य में असुरी सृष्टि का निर्माण प्रारम्भ कर दिया । किसी भी देवता और भगवान की भक्ति न करने का हुक्म दिया गया । मंदिरों में दीपक जलाना, पूजा करना, तुलसी, तिलक लगाना तथा झालर, घंटारव आदि के कार्यक्रम बंद हो गये । प्रत्येक स्थान पर पाप, दुराचार, हिंसा, अनीति के दृश्य दिखाई पड़ने लगे । हिरण्यकश्यपु स्वयं को भगवान् मानने लगा और सब को गुरु मर्कासण्ड के पास असुरी विद्या सीखने के लिए भेजने लगा । इसी निमित्त पुत्र प्रह्लाद को भी उसने गुरु मर्कासण्ड के पास भेजा, किन्तु कुँवर को असुरों की विद्या सिखाने का

प्रयत्न व्यर्थ ही हुआ । उल्टे वे पाठशाला के छात्रों को भक्ति एवं तत्त्वज्ञान का उपदेश देने लगे । गुरु ने बालक प्रह्लाद को बहुत समझाया, पर वे न माने ।

जब मर्कसण्ड का कोई उपाय न चला तब वे अत्यधिक चिन्तित हुए और कर्त्तव्याकर्त्तव्य का निर्णय नहीं कर पाये । उन्होंने प्रह्लाद को राजदण्ड का भय दिलाते हुए यह स्पष्ट कह दिया कि अब वे राजा को सूचित कर देंगे । किन्तु प्रह्लाद ने राजा की शक्ति को राम की भक्ति के बिना निरर्थक बताया । तदनंतर प्रह्लाद को समझाने के लिये गुरु मर्कसण्ड की स्त्री भी प्रयास करती है, परंतु प्रह्लाद ने भौतिक सुख-वैभव, भोग-विलास के प्रति अपनी विरक्ति का तत्त्वज्ञान स्पष्ट किया । अन्त में विवश होकर मर्कसण्ड ने राजा के पास जाकर इसकी शिकायत कर दी । राजा प्रह्लाद को मार डालने के लिये उद्यत होता है किन्तु मन्त्रियों के समझाने पर रुक जाता है । माता क्याधुया अपने पुत्र को समझाती है किन्तु प्रह्लाद पर कोई भी प्रभाव नहीं पड़ता । अंत में कठोर दण्ड का भय दिलाकर प्रह्लाद को पुनः पाठशाला भेज दिया जाता है । गुरु द्वारा डराये जाने पर भी जब कोई अपेक्षित परिणाम नहीं निकला तब उन्हों ने बालक प्रह्लाद को पुनः हिरण्यकश्यपु के पास भेज दिया ।

राजा हिरण्यकश्यपु के दुबारा समझाने पर जब प्रह्लाद न माने तब, उन्हों ने उनके हाथ-पैर बंधवा कर गहरे पानी में डुबाने की आज्ञा दी । किन्तु भगवान् द्वारा उनकी रक्षा हुई । इससे चिढ़कर पावकबंध विद्या में प्रवीण अपनी बहन ढुंढा को बुलाकर प्रह्लाद को उसके हाथों सौंप दिया । चारों ओर से आग लग जाने पर प्रह्लाद भगवान् से प्रार्थना करते हैं और शीघ्र ही संकट-मुक्त होते हैं । ढुंढा जलकर भस्म हो जाती है । इसी प्रकार के अन्य प्रयत्न भी प्रह्लाद के

जीवन को समाप्त करने के लिये किये जाते हैं किन्तु उनका बाल बांका नहीं होता । इसकी एक योजनानुसार हिरण्यकश्यपु ने ऐसा महल बनवाया जिसमें हवा और पानी का संचार न था । असुरों को यह आज्ञा दी गई कि भवन की चारों ओर से रक्षा करें । बालक प्रह्लाद को उस भवन में बुलाकर हिरण्यकश्यपु ने कहा कि " मैं तुम्हारा वध करूं इससे पूर्व अपने भगवान् को बुलाओ । तुम्हारी बातें सुनकर मुझे क्रोध आता है । अपने रक्षक को पुकारो, मैं उसका रूप-रंग देखना चाहता हूँ । प्रह्लाद ने कहा कि उस त्रिपुर के रक्षक का निवास सर्वत्र है । जल, स्थल, काष्ट, पाषाण सब में वह बसता है । हिरण्यकश्यपु ने पूछा क्या वह पाषाण के इस स्तम्भ में है, यदि तुम उसे अभी बुला दो तो मैं देखूं । प्रह्लाद की प्रार्थना से स्तम्भ थरथरा कर फट गया और उसमें से नृसिंह रूप भगवान् प्रकट हुए जिन्हों ने हिरण्यकश्यपु का संहार करके प्रह्लाद को सत्ताधीश बनाया । अंत में भगवान् नृसिंह की स्तुति, पति की मृत्यु के बाद उसके दुष्कृत्यों से दुःखित कयाधुया का विलाप एवं पश्चात्ताप और नगर में भक्ति के अनुकूल नये पवित्र वातावरण का वर्णन किया गया है । यहाँ " लखपति भक्ति विलास " की कथा समाप्त हो जाती है ।

समीक्षा :
o-o-o-o

<u>कथावस्तु</u> :

उपर्युक्त कथा विविध पुराणों में वर्णित हुई है । [१]

oooooooo

१ द्रष्टव्य :

(एक) "श्री विष्णु पुराण "(पराशर संहिता), अध्याय १७ से १९, पृ० सं० १०३ से ११९, कुल अध्याय ३ और पृष्ठ १६ ।

(दो) "मत्स्य पुराण ", अध्याय १६१ से १६३, पृ०सं० ४६१ से ४७१ कुल अध्याय ३ और पृष्ठ १० ।

(तीन) " श्री मद्भागवत् महापुराण ", प्रथम खण्ड, सप्तम स्कन्ध, अध्याय ३ से ८, पृ० सं० ७८३ से ८२३, कुल अध्याय छः और पृष्ठ ४०।

कवि ने अपनी रचना में कहीं भी कथा के स्रोत का उल्लेख नहीं किया है । कदाचित् इस कथा की प्रसिद्धि इसका कारण होगी । जिन विविध पुराणों में यह कथा वर्णित हुई है उनमें से " श्रीमद्भागवत् महापुराण " में इसका विस्तृत वर्णन किया गया है । [२] दोनों की तुलना करने से ज्ञात होता है कि " लखपति भक्ति विलास " की कथा-वस्तु इतिवृत्तात्मक कम और मर्मस्पर्शी उपदेशों से संश्लिष्ट अधिक है । उदाहरणतः आरम्भिक इतिवृत्त जो " श्रीमद्भागवत् " में १६९ श्लोकों में वर्णित हुआ है वह " लखपति भक्ति विलास " में केवल ७८ पद्यों में वर्णित है । दूसरी ओर " श्रीमद्भागवत् की तुलना में इस की कथा-वस्तु में उपदेशात्मक प्रसंगों की सृष्टि अधिक हुई है ।

" लखपति भक्ति विलास " में " श्रीमद्भागवत् " में ऐसे मौलिक प्रसंग पाये जाते हैं । गुरु और गुरु-पत्नी को उपदेश देने के प्रसंग " श्रीमद्भागवत् " में नहीं आते जब यहाँ ऐसे प्रसंगों को कवि ने विस्तारपूर्वक वर्णित किये हैं । दूसरे, हिरण्यकश्यपु जैसे दुर्दम्य, महाशक्तिशाली असुर में भी भय आदि सहज मानसिक दुर्बलताओं और पश्चात्ताप के भावों की कवि ने जो कल्पना की है वह उसकी मौलिक उद्भावना की द्योतक है । जब प्रह्लाद अनेक प्रकार से समझाने, डराने और अत्याचार करने पर भी असुरराज का आदेश नहीं मानते तब वह अंत में कुछ नरम पड़कर प्रह्लाद से उनकी शक्ति का रहस्य पूछता है, संधि करने के लिये समझाता है, अपना आधा राज्य सौंप देने का प्रलोभन देता है परंतु प्रह्लाद प्रभुभक्ति का महत्व समझाते हुए भौतिक सुख,

0000000

२ " श्रीमद्भागवत् " में यह कथा ४० पृष्ठों और २८२ श्लोकों में वर्णित हुई है जो उपर्युक्त पुराणों में वर्णित इस कथा की तुलना में अधिक विस्तृत है ।

वैभव-विलास का सशक्त शब्दों में विरोध करते हैं । हिरण्यकश्यपु अपनी कामाधीनता को धिक्कारते हुए ऐसे पुत्र को जन्म देने का पश्चाताप व्यक्त करता है । यह भी कवि की मौलिक प्रसंगोद्भावना का अच्छा उदाहरण है । तीसरे, भवन-निर्माण तथा उसी के एक स्तम्भ से नृसिंहावतार का तथ्य " श्रीमद्भागवत् " से भिन्न है ।

प्रबंध-सौष्ठव :

प्रबंध-सौष्ठव की कसौटी के आधारभूत तत्त्व हैं, आधिकारिक और प्रासंगिक कथाओं का समुचित गुम्फन, कथा की समीचीन गतिशीलता, मार्मिक स्थलों की योजना एवं चरित्र-सृष्टि । "लखपति भक्ति विलास " में आधिकारिक कथा के साथ प्रासंगिक कथाओं का समुचित गुम्फन सर्वत्र नहीं पाया जाता । इसकी विविध प्रासंगिक कथाएँ प्रस्तुत खण्डकाव्य के प्रतिपाद्य को स्पष्ट करने एवं प्रमुख पात्र प्रह्लाद के चरित्रोद्घाटन में अवश्य सहायक होती हैं । उदाहरणतः गुरु और गुरु-पत्नी के द्वारा प्रह्लाद को अनेक रीति से असुरविद्या का महत्त्व समझाना, वैभव-विलास, शारीरिक भोगादि के प्रति ललचाना, हिरण्यकश्यपु की शक्ति एवं वैभव का डर दिखाना, अत्याचारों से प्रह्लाद के बच जाने पर हिरण्यकश्यपु के द्वारा उनसे इसका रहस्य पूछना, संधि करना, लोभ-लालच दिखाना आदि प्रासंगिक कथाओं के अन्तर्गत प्रत्येक प्रसंग में प्रह्लाद दीर्घ तथा मर्मस्पर्शी उपदेश देते हैं । परन्तु ये उपदेश कथारस में बाधक ही सिद्ध होते हैं । अतः उपदेशों के निमित्त ऐसी प्रासंगिक कथाओं की उद्भावना आधिकारिक कथा को समुचित गति नहीं दे पाती । अतएव आधिकारिक कथा के साथ इन प्रासंगिक कथाओं के सम्बन्ध-निर्वाह में कवि को पूर्णतया सफलता नहीं प्राप्त हो सकी है । कथा की समीचीन गति की दृष्टि से " लखपति भक्ति विलास " की कथा मंद गतिवाली है । जैसाकि दृष्टिगत किया गया है वह

घटनात्मक की अपेक्षा उपदेशात्मकता से संश्लिष्ट अधिक है । उपदेशों के निमित्त जिन प्रासंगिक कथाओं की उद्भावना की गई है, उन में दिये गये लम्बे-लम्बे उपदेश कथा की गति को अवरुद्ध कर देते हैं । जैसे गुरु-पत्नी का प्रह्लाद को सत्ता और शक्ति-सम्पन्न हो कर विविध जाति की सुन्दरियों से विवाह करके भोग-विलासमय जीवन व्यतीत करने की सलाह देना तथा उत्तर में प्रह्लाद द्वारा सौन्दर्य का विस्तृत वर्णन करके नारी के शरीरभोग के प्रति तिरस्कार भाव व्यक्त करना और आदर्शनारी के लक्षण गिनाना । यह प्रसंग छंद संख्या १८८ से २५५ तक चलता है जो कि कथा की वांछनीय गति में बाधक है । इसी प्रकार गुरु मर्कासण्ड द्वारा हिरण्यकश्यपु की शक्ति, वैभव और सत्ता का डर दिखाना और उत्तर में प्रह्लाद द्वारा भौतिक संपत्ति, सत्ता, शरीरशक्ति की क्षणभंगुरता के विषय में दीर्घ उपदेश देना । यह प्रसंग भी छंदसंख्या १४४ से १७० तक चलता है । अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि सम्बन्ध-निर्वाह की दृष्टि से प्रबन्ध संगठन में कवि को आंशिक सफलता मिली है ।

मार्मिक प्रसंगों की योजना की दृष्टि से " लखपति भक्ति विलास " की कथा में कवि की भावुकता का यथेष्ठ प्रमाण नहीं प्राप्त होता । ऐसे मार्मिक प्रसंगों की संख्या अल्प है जो भावुक हृदय को स्पर्श कर सके । क्याधुया के साथ घटित प्रसंगों में कवि ने कहीं कहीं हृदयस्थ अनुभूति की मार्मिक अभिव्यक्ति अवश्य की है । जैसे, एक प्रसंग में बालक प्रह्लाद को राजा के क्रोध से बचा कर जब माता के पास ले जाया जाता है तब वात्सल्य भाव की मार्मिक अभिव्यक्ति हो पाई है :

" अपने उछंग सुत कौं बिठाय, सिर सूंघति चूंबति सुष्ष पाय ।
सिष्या सुभ सुत कौं देति माय, राते सक्रोध सुनि द्रिगति राय ।।"
("लखपति भक्ति विलास " छं०सं० २८१)

क्याधुया के हृदय में यह भय है कि उसके पुत्र को निर्दयता से मार डाला जायेगा तब वे अपने मंत्री से कहती हैं कि प्रत्येक संभव उपाय से राजा को राजी कर के पुत्र को बचा लिया जाय :

" कह मंत्री कौं यौं क्याधूअ, हम भाग तुम जो ह्यां सचिव हुअ ।
राजी ज्यौं त्यौं करि महाराज लीजै बचाय तुम बडी लाज ।।"
(लखपति भक्ति विलास " छं०सं० २९८)

जब गुरन मर्कसण्ड असुरविद्या सिखाने में निष्फल होते हैं तब उनके हृदय में राजा के क्रोध का भय जगता हैं । भय की अभिव्यक्ति कवि ने सफलतापूर्वक की है :

" उठि चल्यौ संड मर्क अधीर, परजरयौ अंग मन अधिक पीर ।
निस्वास नीर बहु बहत नैन, बैठो सुधाम बोलत न बैन ।। "
(वही, छं० सं० ११२)

यहाँ कवि ने गुरन मर्कसण्ड की मानसिक वेदना, भय, खीभन, अधीरता की सुन्दर व्यंजना की है । हिरण्यकश्यपु को जब अपने प्रयत्नों में निष्फलता मिलती है तब उसके विषाद का यह वर्णन भी मार्मिक है :

" पेष्यौ नृप सुत अपनौ पलाद, उत हरित बीचि बैठौ अल्हाद ।
बहु बढ्यौ असुर नृप मन विषाद, सिगरे वैभव के गये स्वाद ।।
बिलष आसुर हुव कुसल बाल, कहूं सूभ्यौ है भुवपाल काल ।
नृप कौ मन मुष मौ बहु मलीन, निश्चै अरिनिकर्यौ ह्वै नवीन ।।"
(वही, छं० सं० ४०५, ४११)

परन्तु समग्र काव्य को देखते हुए ऐसे मार्मिक प्रसंग अल्प हैं । मार्मिक स्थलों को पहचान कर उन की उचित ~~अम~~ अभिव्यक्ति कवि सर्वत्र नहीं कर पाये हैं । ऐसे भी स्थल थे जहाँ कवि पात्रों की मनःस्थिति की मार्मिक

अभिव्यक्ति कर सकते थे । जैसे इन्द्र द्वारा क्याधुया के अपहरण पर उसकी भयार्त मनोव्यथा पुत्र पर निरन्तर आनेवाले संकटों के अवसर पर क्याधुया की मातृहृदय-सुलभ वेदना भयंकर संकटों से होनेवाली रक्षा को देखकर प्रह्लाद के हृदय में भगवान के प्रति श्रद्धा, कृतकृत्यता आदि की व्यंजना इस काव्य में अपेक्षित थी, किन्तु कवि ने ऐसे प्रसंगों को चलता सा कर दिया है । दूसरे, प्रह्लाद के सन्दर्भ में मार्मिक भावों की अभिव्यक्ति के स्थान पर नीरस और शुष्क उपदेशों की भरमार कथा-रस के अभाव की ही परिचायक है । अतः समग्रतया मूल्यांकन करने पर यह कहा जा सकता है कि मार्मिक प्रसंगों की योजना में लखपतिसिंह इस काव्य के अंतर्गत अंशतः सफल हुए हैं । दूसरे शब्दों में कथा-काव्य में अपेक्षित कवि की भावुकता की विवृत्ति कम मात्रा में ही हुई है ।

चरित्र-सृष्टि :

" लखपति भक्ति विलास " में ग्यारह पात्र हैं — प्रह्लाद, हिरण्यकश्यपु, राजमंत्री, क्याधूया, ढुंढा (हरिण्यकश्यपु की बहन), मर्कासण्ड, गुरु-पत्नी, शोषणासुर की पत्नी, नारद, इन्द्र और ब्रह्मा । इनमें से प्रमुख पात्र दो हैं : प्रह्लाद और हिरण्यकश्यपु । " लखपति भक्ति विलास " की आधिकारिक कथा से इनका सीधा सम्बन्ध है । शेष पात्रों में से क्याधुया, राजमंत्री, मर्कासण्ड, ढुंढा, गुरु-पत्नी आदि गौण पात्र हैं जो प्रासंगिक कथाओं से सम्बन्धित हैं ।

प्रह्लाद और हिरण्यकश्यपु :

प्रह्लाद के पुराण-प्रसिद्ध पात्र को कवि ने उसके परम्परागत रूप में चित्रित न करके उसके स्वभावचित्रण में किंचित् परिवर्तन किया है । लखपतिसिंह का प्रह्लाद एकनिष्ठ भक्त तत्त्वज्ञानी और उपदेशक है । बड़े छोटे सभी को भक्ति और तत्त्वज्ञान सम्बन्धी उपदेश देने में

प्रह्लाद हिचकते नहीं हैं । संतों की भाँति खरे शब्दों में कटु सत्य कहने की हिम्मत और निडरता उन में है । पुराणकारों के प्रह्लाद की तरह वे मुँह बंद करके अत्याचारों को सहन करनेवाले तथा दो हाथ जोड़कर भगवान की सहायता के लिये गिड़गिड़ानेवाले एक विवश भक्त नहीं हैं । उनके उपर्युक्त स्वभाव के कुछ दृष्टांत देखे जा सकते हैं :

एक निष्ठ भक्त : गुरु, गुरु-पत्नी, मंत्री आदि के समझाने पर भी प्रह्लाद अपने एकनिष्ठ भक्तिभाव से डोलते नहीं हैं । माता कयाधुया भी बड़े प्रेम से उन्हें अपने पिता की बात मान लेने को समझाती हैं, किन्तु प्रह्लाद सभी को अपने दृढ़ निश्चय का परिचय देते हैं —

" मैं मन रंग्यौ स्याम सौं अैसौं वाकौ रंग ।
और न रंग चढै उहां गाढौ स्याम सुरंग ।। "
(लखपति भक्ति विलास " छं०सं० २८९)

प्रह्लाद की इस एकनिष्ठता के विषय में कवि लिखते हैं :

" जल झष जैसी प्रीति जियं बांधी हरि सौं बाल ।
जल तैं झष न्यारौ भयौ तजे प्रान ततकाल ।। "
(वही, छं० सं० ३०७)

तत्वज्ञानी एवं उपदेशक :

प्रह्लाद ने गर्भावस्था में ही महर्षि नारद के तत्त्वपूर्ण उपदेशों को ग्रहण कर लिया था । बाल्यावस्था से ही वे असुरबालकों, गुरु मर्कासण्ड, गुरु-पत्नी, पिता हिरण्यकश्यपु, माता कयाधुया आदि को तत्त्वज्ञान का उपदेश देते हैं । हिरण्यकश्यपु जब उनके प्राण लेने का

डर दिखाता है तब उन्हों ने जो तत्त्व की बात समझाई है वह वास्तव में उनके इस चारित्रिक लक्षण का प्रमाण है :

" पुनि राषै को को कढ़ै प्रान, देहैं कुलविद्या कौन दान ।
बहु भरे घरे जल भू निवास, प्रतिबिंब चंद प्रति घट प्रकास ।।
फूटे घट पिनरि जल येक ठौर, वा मैं ससि इकु वह नहि न और ।
यह देषि समुझि नृप भयौ अंध, वह जोति बिना परि है जु बंध ।। "
('लखपति-भक्ति विलास', छंद सं० ३६०, ३६१)

इस में भारतीय दर्शन के प्रतिबिंबवाद की काव्यात्मक झलक मिलती है । तत्त्वज्ञान से युक्त उपदेशों में प्रह्लाद की वाणी प्रखर और सशक्त हो जाती है । आगे चलकर वे हिरण्यकश्यपु को उसके व्यर्थ गर्व और क्षण-भंगुर सम्पत्ति और सत्ता के मोह की निरर्थकता समझाते हैं । इसी प्रकार का उपदेश वे अपने सहपाठियों [३] और गुरु मर्कसण्ड [४] को भी देते हैं । अपने पिता को स दिये गये प्रभु-भक्ति सम्बन्धी उपदेशों में प्रह्लाद अनेक पुराण-प्रसिद्ध उदाहरण देते हैं :

" पहलैं सुनि भगतनि नाम भूप, पीछैं हनि मो कह डारि कूप ।
हरि भगत भयौ हो अजामेल, षिति छोडि मोष मधि करत षेल ।।
निति सुआ पठावति तास, बेस्या पाये सुरपुर विलास ।
बय बरस बांन ध्रुव भगत बाल, उन्नत पद हरि तिहिं दिय उताल ।।"
(वही, छं० सं० ३८६ और ३८७)

oooooooo

३ द्रष्टव्य : " लखपति भक्ति विलास ", छं० सं० ७४ से ७७ ।

४ वही, छं० सं० १७२ से १७६ ।

ऐसे अनेकविध उपदेशों की योजना प्रस्तुत काव्य में दृष्टिगत होती है जिन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि कवि मानो कोरे ज्ञानोपदेश के लिए इसकी रचना कर रहा है । इन ज्ञानोपदेशों से प्रह्लाद से तत्वज्ञानी व्यक्तित्व पर प्रकाश पड़ता है । दूसरी ओर यह भी कहा जा सकता है कि ऐसे उपदेशों की सर्वत्र योजना चरित्त-सृष्टि की दृष्टि से मानवोचित नहीं जान पड़ती । गुरु-पत्नी उनको असुर-विद्या सीख कर बड़े शक्तिशाली बन कर अपने पिता की भाँति अनेक जाति की सुन्दरियों के साथ भोग-विलास करने को जब समझाती हैं तब वे कामी पुरुष के पतन और उसकी अज्ञानता की तीखी आलोचना करके हिरण्यकश्यपु के ऐसे चरित्र का सशक्त शब्दों में तिरस्कार करते हैं । इस प्रकार प्रह्लाद के द्वारा परोक्ष रूप में हिरण्यकश्यपु के चरित्रगत लक्षणों को दृष्टिगत किया जा सकता है । प्रत्यक्ष रूप में भी कवि ने हिरण्यकश्यपु स्वयं को धिक्कारता, प्रह्लाद के सामने विवश होकर संधि करता, उनको लालच देता दिखाया है । अनेक अत्याचारों पर भी जब प्रह्लाद सुरक्षित होकर लौट आते हैं तब हिरण्यकश्यपु ऐसे कुपुत्र को जन्म देने के कारण स्वयं पर धिक्कार का भाव व्यक्त करता है :

" कहूं जान्यौ नहिं सुत जनम काल, नहि पाप होहि हम हने बाल ।
धिक्कार कामरति भौ अधीन, कामिनि के भोग ----।। "
(लखपति भक्ति विलास, छंद ३४५)

जैसा कि देखा जा चुका है, पुराणकारों से भिन्न कवि ने हिरण्यकश्यपु के शक्तिशाली चरित्र की अपेक्षा उसकी दुर्बलताओं एवं दूषणों को ही अधिक चित्रित किया है । अपनी सीमाओं को देखते हुए कोई शासक अपने शत्रु से संधि का प्रस्ताव रक्खे और प्रलोभन द्वारा युद्ध के संकट को टाल दे, उसी प्रकार हिरण्यकश्यपु भी प्रह्लाद से संधि करने का, उन्हें अर्द्ध राज्यादि देने का प्रस्ताव रखता है ।[५] कवि ने हिरण्यकश्यपु

ooooooo

५ " लखपति भक्ति विलास ", छंद सं० ४३४, ४४२ और ४४३ ।

को पश्चात्ताप और चिन्ता करता, डरता, मृत्यु के भय से काँपता बताया है। पुराण-प्रसिद्ध हिरण्यकश्यपु के चरित्र से यह चरित्र भिन्न प्रकार का है। इस दृष्टि से हिरण्यकश्यपु का चरित्र काव्य के प्रतिपाद्य के सफल निरूपण में सहायक माना जा सकता है। प्रह्लाद की अद्भुत शक्तियों से आतंकित होकर पश्चात्ताप करनेवाले चिंताग्रस्त हिरण्यकश्यपु को कवि चित्रित करते हैं। इसी प्रकार गहरे जल में डुबाये जाने पर भी जब प्रह्लाद सुरक्षित लौट आते हैं तब हिरण्यकश्यपु अपनी मृत्यु की कल्पना की शंका से काँप उठता है :

" उबर्‍यौ जल सिसु छल भयौ, नरपति डर्‍यौ स निदान ।
जाग्यौ अति दुष जीय मैं पुनि कंपत है प्रान ।। "
(" लखपति भक्ति विलास " छंद सं० ३७५)

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि हिरण्यकश्यपु की चरित्र-सृष्टि पुराणों की अपेक्षाकृत अधिक मानवोचित है। अतः उसके चरित्र-चित्रण में कवि को सफल ही कहा जायेगा। तीसरे, हिरण्यकश्यपु के चरित्र में समकालीन शासकवर्ग की मनोवृत्ति की झाँकी भी मिल जाती है।

अन्य पात्र :

अन्य पात्रों में रानी कयाधुया, गुरु, मर्कसण्ड, उनकी पत्नी, राजमंत्री, नारद, इन्द्र, ब्रह्मा आदि इस खण्डकाव्य के गौण पात्र हैं। प्रासंगिक कथाओं के विवेचन में उनका चरित्र निर्देशन करनेवाले प्रसंगों के उदाहरण दिये जा चुके हैं।

निष्कर्ष यह है कि कवि ने पात्रों की संख्या का अनावश्यक विस्तार नहीं किया है। प्रह्लाद और हिरण्यकश्यपु को प्रमुखता देकर कवि ने अपने उद्देश्य की सिद्धि में सफलता प्राप्त की है। " लखपति भक्ति विलास " की चरित्र-सृष्टि एवं उसका निर्वाह खण्डकाव्य के अनुरूप हुआ है।

२ सदाशिव-ब्याह :
०००००००००००००००

महाराव लखपतिसिंह रचित यह दूसरा खण्डकाव्य है । तृतीय अध्याय के अन्तर्गत दिये गये संक्षिप्त परिचय से यह स्पष्ट है कि " सदाशिव-ब्याह" शिव और पार्वती के विवाह की प्रसिद्ध पौराणिक कथा का आधार लेकर लिखा गया खण्डकाव्य है । कवि ने इसकी रचना रीतिकाल की मुख्य प्रवृत्ति शृंगारिकता के अनुरूप की है । उसमें शिव-कथा सम्बन्धी पुराण-प्रसिद्ध गंभीर प्रसंगों के स्थान पर शृंगार के अनुरूप ऐसे व्यंगात्मक और विनोदपूर्ण प्रसंगों एवं पात्रों की सृष्टि की गई है । कुछ गंभीर वातावरण से प्रारम्भ होनेवाला यह खण्डकाव्य विवाह के मंगलमय प्रसंग में पर्यवसित होता है । सर्वप्रथम " सदाशिव-ब्याह" की संक्षिप्त कथा का परिचय दिया जा रहा है :

संक्षिप्त कथा :
०००००००००००००

एक बार ब्रह्मा, विष्णु और महेश किसी एक यज्ञ में एक साथ बैठे थे । वहाँ अपने जामात्र से मिलने के लिए प्रजापति दक्ष भी आये । ब्रह्मा और विष्णु दोनों उठकर दक्ष से मिले, परंतु शिव अपने श्वसुर से मिले नहीं । दक्ष को शिवजी के इस व्यवहार से दुःख पहुँचा । घर पहुंच कर उन्होंने यज्ञ की तैयारी करवाई । सुर, नर, नाग सब को इस यज्ञ में दक्ष ने आमंत्रित किया परंतु शिव को इसकी सूचना तक नहीं दी, इतना ही नहीं, उनको अपमानित करने के लिए उनके यज्ञभाग की स्थापना भी नहीं की । उधर दक्ष-पुत्री गौरी ने अपने पिता के यहाँ यज्ञ में आने के लिए शिवजी से कहा । उन्होंने उत्तर दिया कि " जहाँ राजा की तरह जाना चाहिए वहाँ अनामंत्रित भी मूर्ख ही दौड़ जाते हैं । " परंतु गौरी शिव की आज्ञा माँगकर भूतों सहित अपने पितृगृह पहुँचीं जहाँ उन्हें कोई आदर-स्नेह नहीं मिला, उल्टा उन्होंने देखा कि अपने पति शिवजी का अपमान करने के लिए ईशान दिशा में उनका यज्ञभाग भी स्थापित नहीं किया गया है । परिणामस्वरूप रिस और चिंता के वश गौरी ने चिता रच कर अपनी देह जला दी । शिवजी ने सती के जल मरने के समाचार पाते ही क्रोधांध होकर दक्ष के सर्वनाश के लिए वीरभद्र को भेजा, जिसने यज्ञ को ध्वस्त करके दक्ष परिवार का सर्वनाश किया । ब्रह्मा और महर्षि भृगुने कितने ही लोगों की रक्षा की । सती की मृत्यु के पश्चात् शिवजी ने इस संसार के विषय रस का त्याग कर, महान् तपश्चर्या प्रारम्भ की । ब्रह्मादि देवों ने

इस जगत को काम रहित होने से बचाने के लिए माया की आराधना की । हिमालय की पुत्री गौरी उमा को शिवजी में काम जगाने के लिए प्रेरित किया गया । शिव जैसे माया रहित और मौन तपस्वी में काम जगाने के लिए सुयोग्य उद्दीपक वर्षाकाल में उन्होंने भीलनी का रूप धारण करके शिव की तपोभूमि में प्रवेश किया । राग मल्हार के सुखद स्वरों तथा कामदेव के प्रभाव से शिवजी की आँखें खुलीं । शिव इस अत्यंत सुंदर रूपवाली भीलनी पर मोहित हो गये तथा उन्होंने उसको भीलों के क्षुद्र गृह को छोड़कर कैलास वास करने तथा गुंजाहार छोड़कर माणिक-मोतियों के सुंदर आभूषण धारण करने के लिए प्रार्थना की । तीर ठीक निशाने पर पहुँचा पाकर भीलनी रूपी उमा ने नई चाल चली । उन्होंने शिव को योगी होते हुए भी इस प्रकार भोग की बातें करने के लिये लताड़ना शुरू किया । शिवजी को प्रताड़ित करते हुए कहा कि घानी के बैल की तरह कष्ट उठाना तपश्चर्या नहीं है । भला होता यदि भोग को अपनाते ; योग क्यों लिया है ? हे ज्ञानहीन, तू ध्यान से डोल गया है । बुराई से भरी तुच्छवाणी तू क्यों बोलता है ? हे कपटी योगी, मैं तुम्हें जान गई हूँ, मुँह सँभालकर बोलना । तेरे साथ ब्याह रचा के अपनी जाति को कौन कलंकित करे ? फिर भी शिवजी अनेक शब्दों में भीलनी की रूप प्रशंसा करके, अनेक प्रलोभन दिखाकर कहते हैं कि वे स्वयं महादेव हैं जिसे जगत् मानता है, झूठे जोगी नहीं हैं । भीलनी उन्हें आप बड़ाई न करने की सलाह देती है । यहाँ तक कि ~~वह~~ वह शिव को कलंदर कहकर तिरस्कृत करती है और दूर खड़े रहकर बात ~~करे~~ करने की चेतावनी देती है । भीलनी रूपी उमा ने देखा कि शिवजी अब खूब पकड़ में आ गये हैं, तब वे कामकलाएँ दिखाती हुई अपने सुंदर शरीर को हिला डुलाकर पर्वत चढ़ कर वहाँ से जाने लगती हैं । परंतु शिवजी अधिक उन्मादवश होकर भीलनी के पीछे लगते हैं । अब भीलनी हाथ जोड़कर उन्हें समझाती है कि सन्यासी मेरा संग क्यों चाहते हो, भीलनी से रस-रंग अच्छा नहीं होता । फिर भी शिवजी का अत्यंत आग्रह जारी रहता है तब वह अत्यंत कटु वाणी

में शिव को नग्न, निर्लज्ज, " बदफ़ैल", " बदनीतिवाला " कह कर कहती है कि यहाँ निकट में ही मेरा पति तथा मेरे अनेक देवर-जेठ रहते हैं। बुलाने पर तुम्हारी फजीहत करेंगे, इतना ही नहीं, हे मूढ़ तुम बेमौत मारे जाओगे। शिवजी इससे कहाँ डरने वाले थे ? उनके कहने पर भीलनी ने अपने आदमी को पुकारा। शिवजी ने उसके पति तथा अन्य सबको मौत के घाट उतार दिया। भीलनी ने वहाँ करुण विलाप प्रारंभ कर दिया, तब भोलेनाथ ने कहा तू विलाप न कर, मैं तेरे भीलों को पुनर्जीवन देता हूँ। भीलनीरूपी उमा ने महादेव की बड़ी प्रशंसा करके कहा मेरे भीलों को जीवन दान दे दीजिए आप तो परमेश्वर हैं। मैं आप के घर राजी राजी रहूँगी। शिवजी की अमृतमयी दृष्टि से सब भील जीवित हो गये और उनके पैरों पड़े। आनंदित होकर भीलनी ने शिवजी से कहा कि प्रसन्न होकर अपना सुंदर रूप धारण कीजिए। शिवजी के परमसुंदर रूप के दर्शन करके भीलनी ने हाथ जोड़कर कहा कि मेरी एक अर्ज सुनिये। आपके सिर पर गंगा है तथा आधे अंग में तो उमा हैं तो बताइये मैं आपके पास कैसे रह सकती हूँ ? उत्तर में शिव ने कहा कि हे मानिनी तू भय को छोड़ दे। देव लोग तेरी सेवा करेंगे। दुर्गा तेरी ~~स~~ दासी होगी। इंद्र और अनेक इंद्रानियाँ तेरी " खिदमत " ~~करेंगी~~ करेंगी। तब भीलनी ने बिनती करते हुए अपनी एक अभिलाषा व्यक्त की कि मैं आपका नटवेश देखना चाहती हूँ। यदि आप नटवेश धारण करेंगे तो मानूँगी कि आप मुझ पर कोटि कोटि प्रसन्न हैं, अन्यथा मैं विष खाकर मर जाऊँगी। तब शिवजी बोले :

" जैसौ तेरे जिय रुचै। नव नव तैसौ नाच।
करि हूं मेरी कामिनी। सही प्रेम जुत सांच ।।१४६ ।।
आदि हे ईश अविकार भाउ। सविकार भये सर्व प्रभाउ।
लम जोग छांडि भो भोग लीन्हा। पहर्यौ बागो चुनि चुनि प्रवीन ।।१४७ ।।

नटवेश धारण करके शिवजी ने भीलनी को अनेक वाद्यों सहित नृत्यकर

दिखाया और मार्ग संगीत सुनाया । जैसे :

" गीत वाद्य अरु नृत्य गति । पढि पिलिमह प्रकास ।
शिव नाचे संगीत सब । अद्भुत रस उल्लास ।।२३९ ।। "

उनके इस कृत्य से सुर, नर, नाग सब प्रसन्न हुए । शिव के इस नट नाटक को देख कर शबरी (भीलनी) प्रसन्न हुई । जिस कामिनी को खुश करने के लिये शिवजी ने जोग छोड़ कर भोगी बन कर, नृत्य गान किया ऐसी नारी अनूप है, ऐसा मन में प्रसन्न हो कर सब सुर नर सोचने लगे । शिवजी ने भी जब इस अद्भुत नारी को देखा तो समझ गये कि वह भीलनी नहीं है और शिवजी भेद पाकर हँसने लगे । बोले : नर से नारी का महत्त्व अधिक है । मैंने इसके अपार चरित्र को देखा है । वे बोले :

" मो मह माया जाल में बहकायौ करि बात ।
तो कहो नमो नमो तिया ऐसौ तुमन अवदात ।।२५०।। "

तब भीलनी ने कहा मैं आप की सच्चे मन से दासी हूँ । मेरे साथ ब्याह करने का वचन दीजिए । मेरे पिता हिमाचल है, उनके यहाँ आप सहर्ष बारात(जान ?) ले आइये । मेरे पिता आपके पैर धोकर, सुर, नर, नागों की साक्षी में मेरा कन्यादान करेंगे । ऐसा कहकर उमा अपने रथ पर चढकर अपने घर पहुँची । पार्वती जी ने अपनी माता से कहा कि उन्होंने ऐसे वर को पसंद किया है सुर, नर जिसके पैरों पड़ते हैं । पिता के पास जाकर समझाने का कार्य पार्वती ने अपनी माता को सौंपा । हिमाचल ने अपनी पत्नी की बात को मान्य रखा और प्रसन्न होकर उन्होंने सदाशिव को मंगल पत्रिका भेजी । विप्र के द्वारा मिली मंगल पत्रिका को पढकर शिवजी प्रसन्न हुए । तत्पश्चात् हिमाचल ने दसों दिशाओं में सुर, नर, नाग को पार्वती के शुभ विवाह में आमंत्रित किया । उधर सदाशिव बारातियों को एकत्रित करने लगे । अपने हाथ से पत्र लिख लिख कर शिवजी ने ब्रह्मा, विष्णु आदि देवों, इन्द्र, सूर्य, चंद्र, ग्रह गणों को न्यौता दिया । इनके साथ सावित्री, सरस्वती, लक्ष्मी, रोहिणी तथा अरुंधती,

अनेक अप्सराएँ, गंधर्व, किन्नर, सिद्ध और साधक भी शिवजी की बारात में आये । अनेक प्रेत, भूत, यक्ष, पिशाच, चौसठ जोगिनियाँ तथा नारदादि अनेक ऋषि, नाग नागिनियाँ, वेशुमार जोगी, सन्यासी, जती, फकीर भी आ पहुँचे । शिवजी ने सब का स्वागत किया । सब तैयारियों के बाद शिवजी की सवारी निकली । बाजे-गाजे के साथ बारात को आई देख हिमगिरि द्वार पर स्वागत करने को गये । सिंहासन पर शिवजी को ... बिठाया । अनेक विधियाँ करके शिवजी और पार्वती जी को लग्नवेदी के पास लाया गया । मंगल उच्चारों, आशीर्वचनों और वेदोक्त मंत्रों के साथ दोनों के फेरे हुए । अब गाँठ जोड़ने के लिए पुरोहित ने शिवजी से हाथ जोड़कर यह कहा कि :

" द्यौ अंचरा तुम कन्या के चीर तैं बांधि दूं गाँठि सदा हित होरी।
प्रोहित हाथ दयो सिव सांष तैं कौं कूकि डरयौ गुरन कूदि परयोरी ।।
इंद्र और चंद्र नागेन्द्र हसे नर दूसरी और हसी सब गोरी ।
वापुरौ विप्र पुकारत बाहिर दान न पायौ दिवायौ दगौरी ।।
देवनि दिग्गज दानव मानव देषि हसी उत गोरी की टोरी ।।३०९।।

ब्राह्मणों के समूह ने युगल को आशीर्वाद दिये । उमा के पिता और माता ने वर-कन्या के दोनों वस्त्रों की गाँठ जोड़ी । हिमगिरि ने सोल्लास कन्यादान किया । इसके अनन्तर बारौठी व्यवहार का प्रारम्भ हुआ । अनेक प्रकार के सुस्वादु व्यंजनों का मनमाना भोजन करके सुर, नरादि संतुष्ट हुए । अब दोनों पक्षों की स्त्रियाँ विवाह की गालियाँ गाने लगीं । अन्त में हिमगिरि ने पुत्री को अनेक वस्त्र, आभूषण दिये । वर कन्या और बारातियों को अनेक हाथी, घोड़े, रथ दास, दासियों के साथ आशीर्वाद दे कर बिदा किया । शिवजी ने हिमगिरि के अनेक विनयपूर्ण शिक्षा वचन सुने । शिव-उमा रथ पर बैठे । माता-पिता से बिदा होते समय उमा की

आँखों में आँसू भर आये । माँ ने बेटी को सिखावनें दीं । हिमालय और शिव परस्पर नमस्कार ले-देकर अपने-अपने स्थान पहुँचे ।

" ऐसें हित आनंद सों । शिव सक्ती के संग ।
करियैं सुष लषधीर के । अचल सफल जस अंग ।।३६१।।"

समीक्षा :

कथावस्तु:

" सदाशिव-ब्याह " की कथावस्तु के अनुशीलन द्वारा यह कहा जा सकता है कि उसके दो भाग हैं :

पूर्वकथा तथा मुख्य कथा । पूर्वकथा के अंतर्गत दक्षयज्ञ के आरम्भ से लेकर सती के भस्म होने और शिव के तपश्चर्या में लीन होने तक की घटनाओं का समावेश है तथा उसके अनन्तर ब्रह्मा, इन्द्रादि देवताओं द्वारा पार्वती से शिव का तपोभंग करने की प्रार्थना की प्रस्तावना से मुख्य कथा आरम्भ होती है जिस का पर्यवसान शिव-विवाह के प्रसंग में जाकर होता है । पूर्वकथा पौराणिक कथा के अनुरूप ही है । यह कथा शिवपुराण, कुमारसम्भव तथा रामचरितमानस आदि में लगभग एक ही प्रकार की मिलती है ।[६] किन्तु उत्तरार्द्ध की कथा उत्त

---

६ अ:"श्री शिवपुराण ", रुद्र संहिता द्वितीय, सती खण्ड, अध्याय २७ से ३७ और रुद्रसंहिता तृतीय, पार्वती खण्ड, अध्याय ११, १३, १४ से २२, २७ से २९ और ३५ से ४० । " संक्षिप्त शिवपुराणांक ", "कल्याण ", वर्ष ३६ सं० १ ।

आ: " कुमार संभवम् " कवि कालिदास , निर्णयसागर मुद्रणालय प्रकाशन, १४ वाँ संस्करण, पृष्ठ १४३ से १७३ ।

इ: " रामचरित मानस " , कवि तुलसीदास, गीताप्रेस, गोरखपुर प्रकाशन, १४ वाँ संस्करण, पृ० १०१ से १२१ ।

साहित्यिक परम्परा से कुछ भिन्न रूप में आई है । इस भिन्नता का सर्वप्रथम उल्लेखनीय तथ्य शिव-पार्वती विवाह के उद्देश्य का है । उपरि-निर्दिष्ट पौराणिक सामग्री में सती हिमालय के घर में पार्वती के रूप में जन्म लेने के उपरान्त शिव को प्राप्त करने के लिए तपश्चर्या आरम्भ करती हैं और दूसरी ओर अखण्ड समाधि में लीन शिव को देवताओं द्वारा इसलिए विवाह के लिए उन्मुख करने का प्रयास होता है क्योंकि तारकासुर का वध शिव से उत्पन्न पुत्र द्वारा ही सम्भव था । इस प्रकार प्रथम प्रकार के प्रयास के पीछे व्यक्तिगत जीवन की अथवा प्रकारान्तर से भारतीय नारी की अखण्डनिष्ठा की मान्यता प्रतिष्ठित है और द्वितीय प्रयास के पीछे लोकरक्षण अथवा लोक-कल्याण का उद्देश्य वर्तमान है । व्यक्तिगत और सामुदायिक द्विविध उद्देश्य लोक कल्याण की दृष्टि से अभिन्न ही कहे जायेंगे । किन्तु " सदाशिव ब्याह " में विवाह की घटना की ओर उन्मुख प्रयासों का उद्देश्य उस से भिन्न है । देवताओं का प्रजावृद्धि के लिए शिव का तपोभंग करवाना उद्देश्यगत उपर्युक्त उच्चतर भूमिका का नहीं कहा जा सकता है । दूसरी ओर प्रयास की दिशा भी अतिसामान्य लौकिक भूमिका की ही है । यही कारण है कि पार्वती का यह सारा प्रयास मध्ययुग की एक चतुर नायिका द्वारा किसी सरल एवं सहज ही वासना की ओर उन्मुख हो सकनेवाले सामान्य नायक के प्रति किया गया प्रतीत होता है जो कि पूर्वनिर्दिष्ट संक्षिप्त कथा से स्वयंसिद्ध है ।

उपर्युक्त उद्देश्यगत भिन्नता ही नायिका पार्वती को प्रयासों की दिशा में उन्मुख करती है । इसके लिए महाराव लखपतिसिंह ने भीलनी रूपधारी पार्वती द्वारा शिव को कामासक्त करने की कथा की विस्तारपूर्वक सम्यक् योजना की है । जैसा कि निर्दिष्ट किया जा चुका है कि प्रस्तुत खण्डकाव्य की यही मुख्य कथा है किन्तु यह कथा

पुराणों तथा उन पर आधारित काव्य-ग्रंथों में नहीं मिलती । भीलनी की कथा के संबंध में डॉ० दिनेश का भी यही मत है कि यह प्रसंग अपौराणिक है तथा लोक-गढ़ित ही समझ में आता है । [७] अतः इस अनुमान को तब तक सत्य के निकट स्वीकार किया जा सकता है जब कि ऐसी कोई पौराणिक सामग्री प्रकाश में नहीं आती । इसके अतिरिक्त गुजरात के लोकगीतों में जो कथा मिलती है, वह लखपतिसिंह द्वारा प्रस्तुत कथा से अधिकांशतः मेल में बैठती है । अतः लोकगीतों में से प्राप्त होने वाले एतद्विषयक तथ्यों का संक्षिप्त विवेचन यहाँ प्रासंगिक ही कहा जायेगा ।

गुजराती लोकगीतों में से केवल दो ही लोकगीत लेखक के देखने में आये हैं । इन में एक श्री झवेरचन्द मेघाणी द्वारा सम्पादित " रढियाळी रात " नामक संग्रह के भाग १ में [८] तथा दूसरा डॉ० मंजुलाल मजुमदार द्वारा सम्पादित " गुजराती लोक साहित्य माळा " में मणका संख्या १ से १६ तक में [९] मिलता है । इन दोनों में सम्पूर्ण कथा लगभग समान ही है, केवल विवाह संस्कार का वर्णन द्वितीय संग्रह में अधिक है । इन गीतों की कथावस्तु की सामग्री " सदाशिव-ब्याह " की तुलना में अत्यल्प मात्रा में है । अब यह प्रश्न सहज ही उठ सकता है कि क्या महाराव लखपतिसिंह ने इन गीतों से कथासूत्र लेकर

oooooooo

७ " हिन्दी शिवकाव्य का उद्भव और विकास " विषयक शोधप्रबंध के कर्ता डॉ० रामगोपाल शर्मा "दिनेश"जी ने लेखक के पत्रोत्तर में लिखा है कि, "भीलनीवाला प्रसंग अपौराणिक है – लोकगढ़ंत, यही समझ में आता है । " द्रष्टव्य : डॉ० 'दिनेश' जी का लेखक के प्रति दिनांक १–२–१९७१ का पत्र ।

८ द्रष्टव्य : " रढियाळी रात ", भाग १, पृष्ठ ८६ से ९१ सं० श्री झवेरचन्द मेघाणी, प्रकाशक : गूर्जर ग्रंथरत्न कार्यालय, अहमदाबाद

९ "गुजराती लोक साहित्य माळा", मणका संख्या १ से १६, सं० डॉ० मंजुलाल मजुमदार तथा अन्य । प्रकाशक : गुजरात राज्य लोकसाहित्य समिति, राज्य शिक्षण भवन, रायखड़, अहमदाबाद ।

उसका विस्तार किया है ? दोनों ही ग्रंथों के सम्पादकों ने इन का रचनाकाल अथवा प्राचीनतम अस्तित्व काल नहीं दिया है, अतः "सदा-शिव-ब्याह " की सामग्री का आधार इन्हें मानना तर्कसंगत नहीं कहा जा सकता । दूसरी ओर शिव और भीलनी की लोककथा का संकेत " गोरखबानी " में १० भी प्राप्त होता है अतः उसकी भी संक्षिप्त चर्चा यहाँ आवश्यक प्रतीत होती है । गोरखनाथ के निम्नलिखित पद में मदमाती भीलनी द्वारा अवधूत को योगभ्रष्ट करने की बात साधनात्मक रूपक द्वारा कही गई है :

" भीलडी मातंगी राणी, मृघलौ आंणी ढांणी ।
चरण बिहूंणौ मृघलौं आंण्यौं सीस सींग मुष जाइ न जांण्यौं ।
भणत गोरखनाथ मछिंद्र नां पूता, मार्यो मृघ भैया अवधूता ।
याहि हियाली जे कोई बूमैं ता जोगी कौं तृभुवन सूमैं ।। "

उपर्युक्त पंक्तियों से शिव का योगभ्रष्ट होना तो निर्दिष्ट नहीं होता किन्तु यह तो स्पष्ट ही है कि किसी भीलनी द्वारा किसी योगी के पथभ्रष्ट करने की लोककथा संभवतः उनके युग में प्रचलित रही हो । उपर्युक्त लोकगीतों तथा " सदाशिव-ब्याह " की कथा में स्वयं योगी शिव के सन्दर्भ में भीलनी का यह कार्य-व्यापार सम्बद्ध कर दिया गया है । अतः सम्भव है कि इस प्रकार की कोई लोककथा देश के अनेक भागों में प्रचलित रही हो तथा उपर्युक्त लोकगीतों तथा " सदाशिव-ब्याह" में उसे काव्यात्मक रूप दे दिया गया हो । यह अवश्य है कि जब तक ऐसी कोई ठोस ऐतिहासिक काव्य-सामग्री नहीं प्राप्त हो जाती तब तक किसी निश्चयात्मक आधार को नहीं स्थापित किया जा सकता । अतः

oooooooo

१० " गोरखबानी " (जोगेसुरी बानी) भाग १,
सं० डॉ० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल

निष्कर्ष रूप में लोक-जीवन में प्रचलित इस कथा के दो रूपों की संभावना की जा सकती है —

(१) भीलनी द्वारा किसी योगी को पथभ्रष्ट करने की प्रचलित लोककथा को कालान्तर में शिव-पार्वती-विवाह के सन्दर्भ में विकसित कर लिया गया है ।

(२) भीलनी द्वारा शिव को आसक्त करने की लोक-जीवन में प्रचलित कथा ही इन रचनाओं का आधार बनी हो और गोरखनाथ ने " अवधूत " के सन्दर्भ में उसकी साधनात्मक व्याख्या प्रस्तुत की हो ।

उपर्युक्त निष्कर्षों के साथ साथ यह अवश्य कहा जा सकता है कि उपलब्ध अत्यल्प सामग्री के प्रकाश में लखपतिसिंह द्वारा प्रस्तुत आख्यान का विस्तार, तब तक उनकी मौलिक काव्य-चेतना का ही द्योतक कहा जायेगा, जब तक कि इतनी विस्तृत कथा लखपति-पूर्ववर्ती किसी काव्य-परम्परा में प्राप्त नहीं हो जाती । जो भी हो, फिर भी यह अवश्य कहा जायेगा कि भीलनी रूप पार्वती तथा शिव के प्रेम-प्रसंगों की यह कथा पौराणिक-परम्परा से भिन्न और सर्वथा नवीन ढंग की चरित्र-सृष्टि की संयोजना करती है, जिस पर प्रसंगानुसार आगे विचार किया जायेगा ।

प्रबंध-सौष्ठव :

प्रबंधात्मकता की कसौटी के आधारभूत तत्व हैं : आधिकारिक और प्रासंगिक कथा के समुचित गुम्फन द्वारा कथा की समीचीन गतिशीलता, मार्मिक प्रसंगों की योजना और चरित्र-सृष्टि ।

" सदाशिव-ब्याह " की कथावस्तु में प्रासंगिक कथाओं का एक प्रकार से अभाव है । खण्डकाव्य की एकदेशानुसारी प्रकृति के अनुरूप ही इस में प्रारंभ से अंत तक शिव और पार्वती की कथा को ही मुख्यता दी गई है । जैसा कि निर्दिष्ट किया जा चुका है दक्ष-यज्ञ से ले कर सती के भस्म होने तक की कथा शिव और पार्वती सम्बन्धी मुख्य कथा के साथ कार्य-कारण से सम्बन्धित पूर्वकथा बन कर आई है । सती के भस्म हो जाने के पश्चात् शिव के तपश्चर्या में लीन होने और हिमालय की पुत्री पार्वती के रूप में सती के पुनः जन्म लेने की कथा को जोड़नेवाला कोई सम्बन्ध-सूत्र नहीं दिखाई पड़ता । अतः यहाँ कथा खण्डित दिखाई पड़ती है । सीधे ही ब्रह्मादि देवों द्वारा शिव के तपोभंग के लिये पार्वती को समझाने के प्रसंग से मुख्यकथा का सूत्रपात् कर दिया गया है । इस प्रकार पूर्वकथा और मुख्यकथा के पूर्वापर सम्बन्ध का उचित निर्वाह नहीं हो पाने के कारण कथा की गति में बाधा आती है । कथा की गति की दृष्टि से एक दो अन्य प्रसंग भी विवेच्य हैं । शिव के नटवेश धारण करने के प्रसंग में संगीत, नृत्य, नाट्यादि विषयक शास्त्र-चर्चा जो लगभग १०० छंदों तक चलती है, इस से कथा की गति में अवरोध पैदा होता है । इसी प्रकार विवाह के प्रसंगों में भोजन-सामग्री का विस्तृत वर्णन भी इसी कारण खटकनेवाला है ।

कथावस्तु को देखते हुए इस में मार्मिक प्रसंगों की योजना केवल भीलों की मृत्यु तथा विवाह के पश्चात् पार्वती की विदाई के अवसर पर यत्किंचित् मिलती है ।

शिव-विवाह की कथा जो इतर साहित्यिक स्रोतों में मिलती है, उसमें प्रायः कवियों ने बारात के आगमन, शिव के विचित्र वेष तथा विवाह के पश्चात् बिदाई के अवसर अपनी भावुकता का अच्छा परिचय दिया है और ऐसे प्रसंग हृदयस्पर्शी बन पड़े हैं, किन्तु प्रस्तुत काव्य

में ये प्रसंग उपेक्षित-प्राय हो गये हैं । उल्टे विवाह के अवसर पर पुरोहित के साथ व्यंग-विनोद की अवतारणा करके नवीन प्रसंगोद्-भावना अवश्य की गई है किन्तु परिस्थिति के अनुरूप गम्भीरता का वहाँ अभाव है ।

भीलनी-विलाप का प्रसंग मार्मिक बन पड़ा है । वह अपने को पति की हत्यारी मानते हुए ग्लानि और पश्चात्ताप की अनुभूति की मार्मिक अभिव्यक्ति करती है :

" नारी औगुन सौं भरी हूं हतियारी हाय ।
पैं तैं प्यारी करि तजी, वारी दोष बताय ।।
वल्लभ तेरे दरस बिनु, सूनौ सब संसार ।
गयो छांडि कैं बिनु गुंनह अब मुहि कौंन अधार ।। "
(" सदाशिव-ब्याह ", छं० सं० १२८, १२९)

तीव्र शोकानुभूति में व्याकुल हो कर भीलनी दैव के प्रति अपना आक्रोश व्यक्त करती है :

" अरे दई सुनि निरदई सुष हरि दयौ संताप ।
गिरै उठै पुनि परै बिरहनि करै विलाप ।। "
(वही छं० सं० १३५)

मार्मिक प्रसंग का एक अन्य उदाहरण पार्वती की बिदाई के प्रसंग में मिलता है किन्तु इस में कवि अपनी भावुकता को यथोचित रूप में प्रमाणित नहीं कर सका है :

" माता पितु तैं उमया मिलंत, चंद्राननि द्रिग आंसू चलंत ।
सिछा बेठी कौं देत सार, भोरी मन रषियौ लाज भार ।।

बेटी तेरो पति जगत बंद, या की सेवा करियौ अनंद ।
औसी सिछा दिय अंब आप, पुत्री जु भई अब तू निपाप ।।"

(वही, छं० सं० ३७६ और ३७७)

उपर्युक्त छंद में बिदाई के वातावरण की मार्मिक झलक दिखा कर कवि माता द्वारा शिक्षा की योजना द्वारा अपेक्षित वातावरण को हल्का कर देता है ।

अतः मार्मिक प्रसंगों की योजना का समग्रतया मूल्यांकन करने से इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि कवि उन्हें यथोचित रूप में प्रस्तुत नहीं कर पाया है ।

चरित्र-सृष्टि :
o-o-o-o-o-o

" सदाशिव-ब्याह " के मुख्य दो पात्र हैं, शिव और पार्वती । कथावस्तु को देखते हुए शिव और पार्वती के पात्रों को ही प्रमुख माना जा सकता है ; अन्य गौण पात्र प्रसंगानुसार उपस्थित होकर चले जाते हैं — जैसे : दक्ष, वीरभद्र, भील, पुरोहित, देवी-देवताओं का समूह, हिमवान् तथा उनकी पत्नी आदि । प्रासंगिक कथाओं में क्षणभर उपस्थित होनेवाले इन पात्रों की कोई लाक्षणिक चरित्र-रेखा उभर नहीं पाई है । अतएव यहाँ शिव और पार्वती के चरित्रों की ही चर्चा की जा रही है ।

शिव :
oooo

भगवान् शिवजी इस खण्डकाव्य के नायक हैं । स्वाभिमानी, क्रोधी और विरक्त तपस्वी के होते हुए भी वे पराक्रम, दया, उदारता और भोलेपन के लिये भी पुराणों में प्रसिद्ध हैं । लखपतिसिंह ने अपने

नायक के इन प्रसिद्ध चारित्रिक लक्षणों को अंकित करने के साथ साथ उनके चंचल, मनमौजी और प्रेमी स्वभाव को प्रमुखता दी है । काव्य के आरम्भ में ही शिव के स्वाभिमानी स्वभाव का परिचय मिल जाता है । श्वसुर दक्ष के यहाँ यज्ञ-प्रसंग में अनामंत्रित जाना वे अज्ञानता मानते हैं ।[११] इस स्वाभिमान के कारण अपमान का प्रतिकार दक्ष के सम्पूर्ण यज्ञ के विनाश द्वारा लेते हैं । सती की मृत्यु के पश्चात् उनकी विरक्ति यहाँ परिस्थितिजन्य ही कही जायेगी । ऐसा प्रतीत होता है कि लखपतिसिंह ने शिव के चरित्र को अधिक मानवीय रूप देना चाहा है । यही कारण है कि उपर्युक्त परिस्थिति जन्य वैराग्य भीलनी की शृंगारचेष्टाओं के प्रवाह में बालुका-भित्ति के समान ढह जाता है । आगे चलकर कामासक्त शिव का प्रेमनिवेदन, भीलनी के कटु वाक्यों को सहन करना, उसकी शर्तों को पूरा करने में कर्तव्याकर्तव्य का विचार न करना तथा अंत में नृत्य के लिये भी तैयार हो जाना आदि बातें उनके चरित्र को परम्परागत चरित्र-विधान से बिल्कुल भिन्न रूप में विकसित करती हैं । अतः शिव के चरित्र-विधान में लखपतिसिंह को मौलिक चरित्र-सृष्टि का श्रेय दिया जा सकता है । कहना न होगा कि यह चरित्र-सृष्टि कवि के युग की साहित्यिक प्रवृत्तियों के अन्तर्गत रीतिकालीन शृंगारिकता के अनुरूप ही थी । अतः यह कहना समीचीन ही होगा कि शिव के चरित्र-चित्रण में कवि ने युगीन चेतना का सम्यक् सन्निवेश किया है । इस की दूसरी विशेषता यह है कि चरित्र का यह रूप पुराणों की तुलना में अधिक मानवोचित है ।

पार्वती :
०००००००

प्रस्तुत खण्डकाव्य का यह प्रमुख नारी पात्र है । काव्य

०००००००

११ " पूछति गौरी ईस प्रति, जैयें आपनु जग्य ।
शिव बोले सँदेस बिनु उठि दौरें ते अग्य ।। "
("सदाशिव-ब्याह," छंद संख्या १३)

के छोटे से फलक पर पार्वती तीन रूपों में आती हैं : एक, दक्ष की पुत्री और शिव की पत्नी सती के रूप में, दूसरे, हिमवान् की पुत्री पार्वती के रूप में और तीसरे, भीलनी के रूप में । काव्य के आरम्भ में ही अपने पिता के यहाँ यज्ञ-प्रसंग में सती के भस्म हो जाने की घटना दे दी गई है । सती को पितृगृह के स्वजनों के प्रति आकर्षण अवश्य है परंतु पति के प्रेम और सम्मान के बदले में नहीं । पति का सम्मान न होना सती के लिये अपना अपमान होने के समान है । उनके चरित्र में पति-प्रेम सर्वस्व है जो उनके भस्म होने की उपर्युक्त एक घटना मात्र से प्रमाणित हो जाता है । दूसरे जन्म में वे हिमवान् की पुत्री पार्वती होती हैं जिनको ब्रह्मादि देव शिव जैसे कठोर तपस्वी के तपोभंग के लिये सुयोग्य समझते हैं । पार्वती की माया-शक्ति और सौन्दर्य-शक्ति का यह यथेष्ट प्रमाण है । पार्वती के इन्हीं चारित्रिक लक्षणों से भीलनी के पात्र का निर्माण हुआ है ।

उपर्युक्त सती और पार्वती के रूप से उनके भीलनी रूप को प्रस्तुत खण्डकाव्य में सर्वाधिक महत्त्व प्रदान किया गया है । काव्य की मुख्य कथा भीलनी-चरित्र को ले कर आगे बढ़ती है । भीलनी भोली और सुन्दर है । अपनी जाति के अनुसार वह निडर और साहसी भी है । एक ओर वह भील जाति के प्रति गौरव का अनुभव करती है तथा दूसरी ओर वह अन्य जाति के पुरुषों के प्रति अपना गुस्सा एवं तिरस्कार भाव प्रकट करती है । वह व्यंग्य, कटुवाणी में स्पष्ट बात सुना सकने की क्षमता रखती है । वाक्‌चातुर्य भीलनी का शस्त्र है । भीलनी के उपर्युक्त चारित्रिक लक्षणों के प्रमाणस्वरूप कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं :

" जोगी सुनि हम हैं जाति भील, राति रु दिन बन मैं करैं लील ।
हिय धरैं नये नित गुंजहार, बिचरंत अकेली नहिं विचार ।। "

(" सदाशिव-ब्याह ", छंद संख्या ७७)

इन पंक्तियों में भीलनी के उपर्युक्त चारित्रिक गुणों में से निडरता और साहसिकता का परिचय मिलता है । अपनी जाति के प्रति गौरव और अन्य जाति के पुरुषों के प्रति तिरस्कार का भाव व्यक्त करते हुए वह शिव- जोगी के साथ विवाह करने की अनिच्छा प्रकट करती है :

" रहै कौन तो संग रव्वे गुसाईं
लगै जाति कों गारि और लज्जा जाई ।
सतीव्रत राखों सदा मैं सन्यासी
इहां लाग नांही अरे वन्नवासी ।। "
(वही, छं०सं० ९०)

योग छोड़कर भोग की तुच्छ बात करनेवाले शिवजी के प्रति उसकी व्यंग्य, कटुवाणी सशक्त होने के साथ साथ उसकी स्पष्टवादिता का भी प्रमाण है :

" भलो भोग भीन्हो कहा जोग लीन्हो
वृथा भामिनी भोग को त्याग कीन्हो ।।
बकै तुच्छ बांनी भयो बैल घानी
सहै कष्ट पैं तैं तपस्या न जानी ।। "
(वही, छं० सं० ८८ और ८९)

इस प्रकार भीलनी की चरित्र-सृष्टि कवि ने परंपरागत एवं पुराण-प्रसिद्ध पार्वती जी से एकदम भिन्न रूप में की है । इस में उन्हों ने लोकप्रसिद्ध चरित्र का आधार लिया है जो पूर्ववर्ती समीक्षा से स्पष्ट है । " सदा-शिव-ब्याह " के प्रमुख पात्रों में भीलनी का यह पात्र अत्यंत प्रभावशाली रहा है ।

निष्कर्ष :
००००००

प्रस्तुत अध्याय के अन्तर्गत महाराव लखपतिसिंह के दोनों

खण्डकाव्यों का जो विवेचन प्रस्तुत किया गया है उसके निष्कर्ष रूप में संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि प्रबन्धकाव्योचित वस्तु-संगठन में वे पूर्णतया सफल नहीं दिखाई देते । इन दो काव्यों में से " लखपति भक्ति विलास " तो पौराणिक शैली की रचना प्रतीत होती है और नीति, सदाचार एवं अध्यात्मिकता के नीरस उपदेशों से बोझिल होने के कारण उसका वस्तु-संगठन बिखर गया है । प्रह्लाद, हिरण्यकश्यपु तथा मर्कासिण्ड की चरित्र-सृष्टि में कवि अवश्य सफल हुआ है, किन्तु क्याधुया के चरित्र-चित्रण में अस्वाभाविकता आ गई है । " सदाशिव-ब्याह " में लखपतिसिंह अपेक्षाकृत अधिक सफल हु- हुए हैं । इस काव्य को समकालीन युगबोध के अनुसार प्रस्तुत करने में चरित्रसृष्टि, मार्मिक प्रसंगों की योजना वस्तुसंगठन तथा उद्देश्य सभी में उनकी मौलिकता का परिचय मिलता है । कवि की मूल प्रवृत्ति शृंगारी थी, यह पहले ही स्पष्ट कर चुके हैं । यह खण्डकाव्य इसी शृंगारी प्रवृत्ति से रंजित है । यही कारण है कि जैसी स्वाभाविकता " सदाशिव -ब्याह " में आई है, वैसी स्वाभाविकता, नवीनता तथा निजी काव्य-चेतना की सफल परिणति " लखपति भक्ति विलास " में नहीं आ पाई है ।

द्वितीय खण्डकाव्य की एक उल्लेखनीय विशेषता लोककथा को साहित्यिकरूप देने की है । इस निरूपण में कवि ने लोकजीवन की अपनी पारखी मनोवृत्ति का सुन्दर प्रमाण प्रस्तुत किया है । भीलनी की कथा केवल नवीन कथा के रूप में ही अंकित नहीं हुई अपितु वह उत्त वर्ग का रमणीय एवं सजीव प्रतिनिधित्व करती है । ऐसा प्रतीत होता है कि रीतिकालीन कवियों की अंतर्वृत्ति प्रबन्धात्मक कृतियों में प्रायः नहीं रम सकी है और महाराव लखपतिसिंह को भी इस का अपवाद नहीं कहा जा सकता है । यद्यपि उपर्युक्त दोनों खण्डकाव्यों के रचना-विधान के

तुलनात्मक अनुशीलन से " लखपति भक्ति विलास " से " सदाशिव-ब्याह " में विकासक्रम को लक्ष्य किया जा चुका है, किन्तु दोनों के रचनाकाल में एक वर्ष का अंतर है, जब कि वस्तु-संगठन की दृष्टि से गुणवत्ता का अंतर अत्यधिक है । इसके सम्बन्ध में तीन सम्भावनाएँ की जा सकती हैं —

(१) प्रथम कृति इस दिशा में प्रारम्भिक प्रयास होने के कारण उतनी सफल न बन पड़ी हो और तदनन्तर परवर्ती कृति में उसके कृतित्व का विकास हुआ ।

(२) कथावस्तु में पौराणिकता के आग्रह ने भी संभवतः " लखपति भक्ति विलास " के सहज अभिव्यक्ति-कौशल को दबा दिया हो क्योंकि " सदाशिव-ब्याह " में कवि उक्त आधार का एक सीमा तक ही अनुगामी बना है । अतः कदाचित इस कारण प्रस्तुत कृति में उसके कवित्व की विवृत्ति सम्यक् रूप से हो पाई है ।

(३) " सदाशिव-ब्याह " की कथावस्तु लखपतिसिंह की शृंगारी और विलासी मनोवृत्ति के सर्वथा अनुरूप ही कही जायेगी । अतः इसके कारण मानववृत्तियों का अत्यंत मनोवैज्ञानिक एवं प्रभावी चित्रण इस काव्य में हो सका है ।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि इन दोनों कृतियों में से द्वितीय कृति ही कवि के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का वास्तविक प्रमाण प्रस्तुत करती है, यद्यपि इस में सन्देह नहीं कि इन में से कोई रचना ऐसी नहीं है जो उसे रीतिकाल के प्रथम श्रेणी के कवियों में स्थान दिलाने में समर्थ हो सके ।

०००